17

शुकनासोपदेश - लक्ष्मी का चापल्य

इस पाठ में शुकनासोपदेश को ''आलोकयतु तावत्'' से आरम्भ होकर ''चिन्तितापि वंचयति'' तक के अंश का वर्णन किया गया है। जल के बुल-बुले के समान क्षण स्थायी लक्ष्मी सहसा ही उदित होती हैं और नष्ट होती हैं। वह क्षणभर में आभासित होती हैं और क्षणभर में विलुप्त हो जाती हैं। परन्तु अहो, इसकी लीला के वशीभूत होकर लोग धन के आने पर क्षीण, पीड़ित और दु:खी होते हुए भी पुन: उसकी ही प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार यह लक्ष्मी मोहिनी है। वह श्री लक्ष्मी यौवनावस्था में चापल्य को बढ़ाती हैं जिससे हमारे सद्गुण नष्ट हो जाते हैं, परन्तु गुरूपदेश लोकोपकार के लिए होते हैं। उसके बाद अमात्य शुकनास उपदेश देते हैं कि यौवन की चंचलता का यत्न से परिहार करना चाहिए। जब राज्यलक्ष्मी अभ्युन्नति को सिद्ध करती है। वह अपकर्मो को और उन में प्रवृत्त जनों का कैसे सहायक हैं ऐसा ध्यान करके लोभाविष्ट न होकर सद्विचार का पालन करना चाहिए तथा उन्नति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। यह इस पाठ में चन्द्रापीड के लिए उपदेश समालोच्य है।

उद्देश्य-

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे;

- राजलक्ष्मी का प्रभाव जान पाने में;
- राजलक्ष्मी के स्वरुप को जान पाने में;
- राजलक्ष्मी के स्वभाव को समझ पायेंगे;
- मानव जीवन में राजलक्ष्मी के प्रभाव को समझ पायेंगे और;
- वाक्यों का अन्वयार्थ, पदों का सरलार्थ एवं समास को समझ पायेंगे।

17.1 मूलपाठ

आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनिवेशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्। इयं हि सुभटखड्गमण्डलोत्पल-वन-विभ्रम-भ्रमरी लक्ष्मीः क्षीरसागरात् पारिजातपल्लवेभ्यो रागम्, इन्दुशकलोदेकान्तवक्रताम्, उच्चैःश्रवसश्चञ्चलतां, कालकूटान्मोहनशक्तिं, मदिराया मदं, कौस्तुभमणेर्नैष्ठुर्यम् इत्येतानि सहवासपरिचयवशाद्विरहविनोदचिह्नानि गृहीत्वैवोद्गता।

व्याख्या-

कल्याणाभिनिवेशी - मंगल प्राप्ति की और आग्रह वाली इस लक्ष्मी को ही सर्व प्रथम देखो अर्थात् विचार करो, यह लक्ष्मी निपुण योद्धाओं के खड्ग समूह स्वरुप कमल वन में विचरण करने वाली भ्रमरी के समान है और यह क्षीर सागर में से निकलते समय रत्नों के साथ रहने से पहले ही प्रेम उत्पन्न हो गया था, उसे उन लोगों के विरह दुःख दूर करने के लिए चिह्नस्वरुप पारिजात पल्लव के समीप से राग, चन्द्रखण्ड से अत्यन्त वक्रता, उच्चैश्रवा अश्व के पास से मादकता एवं कौस्तुभमणि के पास से अत्यन्त निष्ठुरता ये सब साथ लेकर ही मानो बाहर आई है। अर्थात् क्षीरसागर में साथ रहने के परिचय के कारण पारिजात के पल्लवों से राग (ललिमा या आसक्ति), चन्द्रमा की कला से नितान्त वक्रता (कुटिलता या प्रतिकूलता) उच्चैः श्रवा नामक अश्व से चंचलता, कालकूट विष से मोहन (वश में करने की या बेहोश करने की) शक्ति, मदिरा से मद (घमण्ड या नशा), कौस्तुभमणि से निष्ठुरता (निदर्यता या कठोरता) इन विरह विनोद के चिह्नों को लेकर बाहर आयी।

सरलार्थ-चन्द्रापीड का यौवराज्यभिषेक होगा और उसके राज्यकार्य चलाने के लिए राजलक्ष्मी का ज्ञान अपेक्षित है अतः शुभार्थी शुकनास उसके लिए राजलक्ष्मी का ज्ञान देते हैं।

हे चन्द्रापीड यह कल्याण चाहने वाली है अतः आदि में उस लक्ष्मी का विचार करना चाहिए। यह लक्ष्मी तलवार रुपी मंगलवन में भ्रमरी के समान भ्रमण करती हैं। न केवल यही अपितु यह तो क्षीर सागर से उत्पन्न होते ही पारिजातवृक्ष से रंग, चन्द्रमण्डल से वक्रता, उच्चैःश्रवा से चंचलता, कालकूटविष से मोहिनी शक्ति, मदिरा से अंहकार और कौस्तुभमणि से निष्ठुरता स्वीकार करके विनोद वियोग चिह्न के रुप में यह लक्ष्मी उत्पन्न हुई।

व्याकरणविमर्श-

क) समासः

1. **सुभटखड्गमण्डालोत्पलवनविभ्रमभ्रमरी** - खड्गानां मण्डलं खड्गमण्डलमिति षष्ठीतत्पुरुषः। सुभटानां खड्गमण्डलं सुभटखड्गमण्डलमिति षष्ठीतत्पुरुषः। सुभटखड्गमण्डलमवे उत्पलवनं सुभटखड्गमण्डलोत्पवनम् इति कर्मधारयसमासः। सुभटखड्गमण्डलानाम् उत्पलवनमिति इति वा षष्ठीतत्पुरुषः। सुभटखड्गमण्डलोत्पलवने विभ्रमः सुभटखड्गमण्डालोत्पलवनविभ्रमः इति सप्तमीतत्पुरुषः। सुभटखड्गमण्डालोत्पलवनविभ्रमे भ्रमरी सुभटखड्गमण्डालोत्पलवनविभ्रमभ्रमरी इति सप्तमीतत्पुरुषः।

2. **पारिजातपल्लवेभ्यः** - पारिजातस्य पल्लवानि पारिजातपल्लवानि इति षष्ठीतत्पुरुषः। तेभ्यः पारिजातपल्लवेभ्यः इति पञ्चमीतत्पुरुषः।

ख) सन्धिविच्छेदः

1. **इन्दुशकलादेकान्तवक्रताम्** - इन्दुशकलात् + एकान्तवक्रताम्।
2. **कालकूटान्मोहनशक्तिम्** - कालकूटात्+ मोहनशक्तिम्।
3. **गृहीत्वैवोद्गता** - गृहीत्वा+ एव+ उद्गता।

अलंकारविमर्श-

1. इस में गृहीत्वा इव का प्रयोग होने से क्रियोत्प्रेक्षा है उत्प्रेक्षा का सामान्य लक्षण ''भवेत्सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।''
2. रागाद्यर्य का रक्तिमादि और अनुरागादि की भिन्नता होने पर भी श्लेष से अभेदारोप होने से अतिशयोक्ति है - उसका लक्षण साहित्यदर्पण में - ''सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिश योक्तिर्निगद्यते।''

कोशः -

1. ''हिमांशुश्चन्द्रमाश्चन्द्र इन्दुः कुमुदबान्धवः'' इत्याद्यमरवचनात् इन्दुशब्दस्य हिमांशुः, चन्द्रमाः, चन्द्रः, कुमुदबान्धवः इत्यादयः पर्यायाः।

पाठगतप्रश्न-17.1

1. लक्ष्मी ने किससे राग स्वीकार किया?
2. श्री (लक्ष्मी) ने किससे चंचलता को सीखा?
3. लक्ष्मी ने किससे निष्ठुरता जानी?
4. लक्ष्मी ने मोहनशक्ति कहाँ से सीखी?
5. लक्ष्मी.....पारिजात पलवेभ्यः राग गृहीत्वैवोद्गता?
6. आलोकयतु तावत् ..... लक्ष्मीरेव प्रथमम्?
7. स्तम्भो का मेल करो-

स्तम्भ -1	**स्तम्भ -2**
1. रागम्	1. कालकूटात्
2. वक्रताम्	2. उच्चैःश्रवसः
3. चंचलताम्	3. कौस्तुभमणेः

4. मोहनशक्तिम् 4. मदिराया:

5. मदम् 5. इन्दुशकलात्

6. नैष्ठुर्यम् 6. पारिजातपल्लवेभ्य:

8. कालकूटान्मोहनशक्तिम् - का सन्धिविच्छेद करो?

17.2 मूलपाठ

न ह्येवंविधम् अपरिचितमिह जगति किंचितदस्ति, यथेयमनार्या। लब्धापि खलु दु:खेन परिपाल्यते। दृढकुणपाशसन्दाननिष्पदीकतापि नश्यति, उद्दाम-दर्प-भटसहस्त्रोल्लासितासिलता- पंजर-विधृताप्यपक्रामति। मदजल-दुर्दिनान्धकारगज-घन-घटा-परिपालितापि प्रपलायते, न परिचयं रक्षति, नाभिजनमीक्षते, न रूपमालोकयते, न कुलक्रममनुवर्तते, न शीलं पश्यति, न वैदग्धां ऋयति, न श्रुतमाकर्शयति, न धर्ममनुरुधयते, न त्यागमाद्रियते, न विशेषज्ञतां विचारयति, नाचारं पालयति, न सत्यमनुबुध्यते, न लक्षणं प्रमाणीकरोति। गन्धर्वनगरलेखेव पश्यत एव नश्यति। अद्याप्यारूढ-मन्दर-परिवर्तावर्त-भ्रान्ति-जनित-संस्कारेव परिभ्रमति। कमलिनि-सञ्चरणव्यतिकर-लग्न-नलिन-नाल-कश्टकक्षतेव न क्वचिदपि निर्भरमाबध्नापि पदम्। अतिप्रयत्नविधृतापि परमेश्वरगृहेषु विविध-गन्धगज-गण्ड-मधुपान-मत्तेव परिस्खलयाति। पारुष्यमिव उपशिक्षितुम् असिधारासु निवसति। विश्वरूपत्वमिव ग्रहीतुमाश्रिता नारायणमूर्त्तिम्। अप्रत्ययबहुला च दिवसान्तु-कमलमिव-समुपचित-मूल-दण्ड-कोशमण्डलमपि भूभुजम्। लतेव विटपकालध्यारोहति। गङ्गेव वसुजनन्यपि तरङ्गेगुद्वुदचञ्चला। दिवसकरगतिरिव प्रकटित-विविध-सङ्क्रान्ति:। पातालगुहेव तमोबहुला। हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्यहृदया। प्रावृडिवाचिरद्युतिकारिणी। दुष्टपिशाचीव दर्शितानेकपुरुषोच्छ्राया स्वल्पसत्त्वमुन्मत्तीकरोति।

व्याख्या- इस संसार में इस प्रकार का अपरिचित अन्य कोई नहीं है, जैसी यह दुष्टा लक्ष्मी है। यह बड़ी कठिनाई से कष्टों को सहन करने के बाद प्राप्त होती हैं परन्तु प्राप्त होने के बाद भी इसका पालन रक्षण अत्यन्त कठिनाई से हो पाता है। अर्थात् धन-सम्पत्ति की प्राप्ति बडी मुश्किल से होती है और यदि धन मिल भी जाये तो उसकी रक्षा आदि में अनेक कष्ट उठाने पडते हैं। शौर्य आदि उत्तम गुण रूपी रस्सियों के बन्धन से निश्चल की हुई भी यह पलायन कर जाती है अर्थात् नष्ट हो जाती है।

उद्दाम दर्प वाले हजारों योद्धाओं की तलवारों के पहरे से भी यह निकल जाती है। मदजल की धारा से अन्धकार के समान कलिमा को उत्पन्न करने वाले हाथियों के झुण्ड या समूह जो कि वर्षाकालीन घन घटाओं के समान दृश्य उपस्थित करती है। उनके द्वारा रक्षित होने पर भी वह पलायन कर जाती है। वह परिचय के अनुरोध से एक स्थान पर नहीं बैठती, वह गजसमूह से रक्षित होने पर भी दूसरे स्थान पर चली जाती है।

यह लक्ष्मी इतनी दुष्टा है कि किसी से परिचय होने पर भी उसके पास नहीं रुकती है अर्थात् परिचय का भी कोई ध्यान नहीं रखती, जब इसे जाना होता है तुरन्त छोड़कर चली जाती है। यह उच्च कुलीन व्यक्ति है, ऐसा भी यह नहीं देखती है। यह व्यक्ति के रुप सौन्दर्य को भी

टिप्पणी

नहीं देखती है अर्थात् कोई सौन्दर्यवान है तो उसके पास भी लक्ष्मी स्थित नहीं रहती है। यह कुलक्रम का अनुसरण नहीं करती है अर्थात् कोई व्यक्ति लक्ष्मीवान है और उसकी सन्तान भी पूर्व परम्परा के अनुसार धन सम्पन्न होगा ऐसा भी नहीं देखा जाता है अर्थात् वंश परम्परा से भी एकत्र नहीं ठहरती है। यह किसी के शील सदाचार की भी परवाह नहीं करती है कोई अत्यधिक विद्वान् है उसके पाण्डित्य का विचार नहीं करती है अर्थात् उसकी विद्वता का भी सम्मान नहीं करती है मूर्खों का अवलम्बन करती है। वह लक्ष्मी वेदशास्त्र आदि को नहीं सुनती है और न ही धर्म का अनुरोध रखती है अर्थात् यह शास्त्रों के ज्ञान से रहित तथा धर्माचरण से हीन व्यक्तियों के पास भी रहती है। इसके लिए किसी व्यक्ति का शास्त्रज्ञ एवं धर्मशील होना आवश्यक नहीं है। यह त्याग का भी आदर नहीं करती है। क्योंकि यह कृपण के घर में भी पाई जाती है। यह विशेषज्ञता का विचार नहीं करती है, क्योंकि प्राय: देखा जाता है कि विशेषज्ञ विद्वान दरिद्रता का जीवन व्यतीत करते हैं। यह न आचार का पालन करती है और न ही सत्य को जानती है। क्योंकि यह अत्याचारी और झूठे लोगों के घर में पाई जाती है। जिन व्यक्तियों के शरीर पर सामुद्रिक शास्त्रों के अनुसार धनवान बनने के शुभ चिह्न हैं। यह उनके पास भी नहीं पाई जाती है। इस प्रकार यह शुभ लक्षणों को भी प्रमाणित नहीं मानती है।

जिस प्रकार आकाश में दृश्यमान गन्धर्वों के नगरों की कतारें देखते-देखते ही नष्ट हो जाती हैं उसी प्रकार यह लक्ष्मी भी पुरुषों के पास से क्षण भर में नष्ट हो जाती हैं। गन्धर्वनगरलेखा को शास्त्रकार अशुभ सूचक मानते हैं जैसा कि वृहत्संहिता में कहा गया-गन्ध-**र्वनगरमुत्थितमापाण्डुरमशनिपातवातकरम्। दीप्ते नगेन्द्रमृत्युर्वामेरिभयं जय: सव्ये॥**

समुद्रमंथन के समय मन्दरांचल के भ्रमण से उसमें जो भँवर उत्पन्न हुई थी, उस संस्कारवश ही मानो अब भी घूम रही है। कमलवन में विचरण करने के समय कमलदण्ड के कांटे लग जाने से चरण शत्-विक्षत हो गया है इसी से मानो यह किसी स्थान पर भी जम कर पैर नहीं रखती है बड़े-बड़े राजाओं के महलों में अत्यन्त उद्योग करके रखी जाने पर भी अनेक मदगजों के गंडस्थल के मधुपान से मत्त होकर ही मानों स्खलन कर जाती है अर्थात् दूसरे राजाओं के पास चली जाती है। निष्ठुरता सीखने के लिए ही मानो तलवार की धारों में निवास करती है। विष्णु के पास से अनेक प्रकार के रूप ग्रहण करने के लिए ही मानो इसने उसके शरीर का आश्रय लिया हैं। इसके प्रति अविश्वास ही अधिक परिमाण में करना होता है क्योंकि कमल के मूल, नाल को अर्थात् कली एवं विस्तार इन सबों से विशेष वृद्धि पाते रहने पर भी सूर्यास्त के बाद शोभा जिस प्रकार उस कमल को त्याग देती है उसी प्रकार राजा का सैन्य, दण्डशक्ति, कोश खजाना आदि राज्य इन सबों से विशेष वृद्धि पाते रहने पर भी लक्ष्मी, उस राजा का परित्याग कर देती है।

वह लक्ष्मी लतावल्ली के समान है अर्थात् लता जिस प्रकार वृक्ष की शाखाओं का आश्रय लेती है लक्ष्मी भी उसी प्रकार धूर्तो का सहारा लेती हैं। गंगा जिस प्रकार वसुओं की जननी होने पर भी तरंगो और बुद्बुदों से चंचल है, यह लक्ष्मी भी उसी प्रकार धन को उत्पन्न करने वाली होने पर भी तरंगों एवं बुल-बुलों के समान चंचल है।

सूर्य की गति जिस प्रकार महाविष्णुवत् आदि नाना प्रकार से संक्रान्तियों का प्रकाश करती है यह लक्ष्मी भी उसी प्रकार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास संचरण करती है जिस प्रकार

पाताल की गुफा में अधिक अंधकार रहता है। इसी प्रकार लक्ष्मी के आने पर लोगों को भी अधिक परिमाण में मोह हो जाता है।

वह लक्ष्मी घटोत्कच जननी हिडिम्बा के समान है जैसे भीमसेन के साहस ने हिडिम्बा राक्षसी के मन का अपहरण किया था उसी प्रकार केवल भयंकर साहस ही इसके मन का अपहरण कर सकता है। वर्षा काल में जिस प्रकार क्षणभंगुर विद्युत का प्रकाश होता है उसी प्रकार यह लक्ष्मी भी लोगों की अति अल्पकाल रहने वाली ही गृहनगर को शोभा का प्रदर्शन करती है।

जिस प्रकार कोई दुष्टा पिशाचिनी तमोगुणरुपदोषयुक्ता अपने शरीर को अनेक पुरुषों की ऊँचाई वाला बनाकर दुर्बल व्यक्तियों को भय से उन्मत करती है उसी प्रकार यह लक्ष्मी भी अनेक पुरुषों को उन्नति दिखाकर अन्य अल्प बुद्धि वाले निर्धन पुरुषों को उसकी आशा से उन्मत पागल कर देती है।

सरलार्थ- यह लक्ष्मी कैसी है, यह शुकनास चन्द्रापीड को बोध करता हैं कि इस संसार में दुर्जना लक्ष्मी से कोई भी अपरिचित नहीं है क्योंकि प्राप्त होकर भी दु:ख से पालन की जाती है शौर्यादि द्वारा सुदृढता से इसे स्थापित करने पर भी शीघ्र ही यह नष्ट हो जाती है। अनेक योद्धा राजाओं द्वारा बांधे जाने पर भी पलायन कर जाती है। मदोन्मत्त गजरूप मेघ द्वारा रक्षित होने पर छोडकर चली जाती है। वह परिचितों को रक्षा नहीं करती अर्थात् पालन नहीं करती है। आत्मीय जनों को नहीं देखती, रुपवान की भी रक्षा नहीं करती, न ही आचार क्रम का अनुसरण करती है, न ही पवित्रता का पालन करती है न पांडित्य को स्वीकार करती है, न ही शास्त्रों का श्रवण करती है, न ही धर्म के नियमों को स्वीकार करती है, न ही त्याग अर्थात् दान देने वालों का आदर करती है, न ही विषय विशेषज्ञों को सम्मान करती है, न ही आचार का पालन करती है, न ही सत्य को समझती है, न ही शरीर गत चिह्नादि को प्रमाणरुप में स्वीकार करती है। गन्धर्व नगर की पंक्ति के समान क्षणभर के लिए आभासित होती है, और विलीन हो जाती है, मन्दरांचलपर्वत के भ्रमण से उत्पन्न वह लक्ष्मी स्वभाववश एक भवन से दूसरे भवन में चली जाती है। कमलवन में विहार करते समय उसके चरण कण्टक से क्षत होने के कारण वह कहीं पर भी स्थायी रुप से पाद को स्थापित करने में समर्थ नहीं है। बहुत से राजाओं या धनिकों द्वारा अपने भवन में अत्यधिक प्रयत्न से संरक्षित होने पर भी जैसे गजकपोलस्थ मधु को पीकर उन्मत्त के समान अर्थात् पागल होकर नीचे गिर जाता है। कठोरता की शिक्षा होने से तलवार धार पर निवास करती है। वह विश्वरुपत्व ग्रहण करने के लिए श्रीविष्णु के शरीर में प्रवेश किया ऐसा प्रतीत होता है। वह बीच में ही अविश्वसनीय होती हुई संध्याकालीन कमल के समान विशाल भूमण्डल अधिपति राजा का भी परित्याग कर देती है। लता जैसे वृक्ष का सहारा लेती है वैसे ही यह धूर्तजनों का अवलम्बन करती है। देवी गंगा भीष्म की माता है परन्तु तरंगों से बुदबुदों से चंचल है उसी प्रकार यह लक्ष्मी धन की अधिष्ठात्री होकर भी तरंग के समान अस्थिर है। जैसे सूर्य की गति का मेषवृषादि सक्रान्ति होती है। उसी प्रकार यह बहुत से लोगों में संक्रामित होती है। पाताल लोक की गुफा जैसे अंधकारमय होता है। वैसे ही यह भी तमोगुण सम्पन्न है। हिडिम्बा जैसे भीम के साहस को देखकर अभिभूत होती हुई उससे आकृष्ट होती है। उसी प्रकार अत्यधिक साहसिक पुरुष को देखकर उससे आकृष्ट होती है। वर्षा ऋतु में जैसे अचिरधुति नाम विद्युत उत्पन्न होती है उसी प्रकार यह भी क्षणस्थायी कान्ति को उत्पन्न करती है। दुष्ट पिशाचिनी के समान अपने शरीर को बढ़ाकर सभी को

टिप्पणी

भयभीत करती है। उसी प्रकार यह भी विविध पुरुषों की उन्नति दिखाकर मेरे पीछे चलो ऐसा कहकर सभी को उन्मत करती है।

व्याकरणविमर्श-

क) समासः-

1. **दृढगुणपाशसन्दाननिष्पन्दीकृता** - दृढा च ते गुणाः दृढगुणाः इति कर्मधारयसमासः। दृढगुणाः एव पाशः इति दृढगुणपाशः इति कर्मधारयसमासः। तेन सन्दानं दृढगुणसन्दानम् इति तृतीयातत्पुरुषः। तेन निष्पन्दीकृता दृढगुणसन्दाननिष्पन्दीकृता इति तृतीयातत्पुरुषसमासः।
2. **उद्दामदर्पभटसहस्रोल्लासितासिलतापञ्जरविधृता** - उद्दामः दर्पः यस्य स उद्दामदर्पः इति बहुव्रीहिसमासः। भटानां सहस्र भटसहस्रम् इति षष्ठीतत्पुरुषः। उद्दामदर्पः भटसहस्रम् उद्दामदर्पभटसहस्रम् कर्मधारयः। तेन उल्लासिता उद्दामदर्पभटसहस्रोल्लासिता इति तृतीयातत्पुरुषः। सा एवं असिलता उद्दामदर्पभटसहस्रोल्लासिता-सिलता इति कर्मधारयः। सा एव पञ्जीम् उद्दामदर्पभट-सहस्रोल्लासितासिलतापिञ्जीम् इति कर्मधारयसमासः। तत्र विधृता उद्दामदर्पभटसहस्त्रोल्लासितासिलतापञ्जरविधृता इति सप्तमीतत्पुरुषः।
3. **समुपचितमूलदण्डकोशमण्डलम्** - मूलं च दण्डश्च कोशश्च मण्डलं च मूलदण्डकोशमण्डलानि इति इतरेतरयोगद्वन्द्वः। समुपचितानि मूलदण्डकोशमण्डलानि यस्य स समुपचितमूलदण्डकोशमण्डलः,तम् इति बहूव्रीहिसमासः।

ख) सन्धिविच्छेदः

1. **यथेयम्** - यथा +इयम्।
2. **वसुजनन्यपि** - वसुजननी +अपि।

अलंकारविमर्श -

1. मदजलदुर्द्दिनान्ध में गज में मेघ का मदजल में दुर्दिन का आरोप होने से परम्परित रुपक अलंकार है। उसका लक्षण साहित्यदर्पण में - ''यत्र कस्यचिदारोपः पररोपणकारणम्। तत्परम्परित म्।''
2. पातलगुहा इव, हिडिम्बेव, प्रावृड इव, दुष्टपिशाची इव में उपमा अलंकार है।
3. कमलिनीति, अतिप्रयत्नेति और, प्रावृडिव इन वाक्यों में उत्प्रक्षांलकार है।

कोशः-

1. ''विष्णुर्नारायणः कृष्णो वैकुण्ठो विष्टरश्रवाः'' इत्याद्यमरोक्तेः विष्णुः नाराध्यणः, कृष्णः, वैकुण्ठः, विष्टरश्रवाः इत्यादयः समार्थकशब्दाः।
2. ''अधोभुवनपातालं बलिसद्रा रसातलम्। नागलोकः'' इत्यमरवचनात् अधोभुवनम्, पातालम्, बलिसद्रा, रसातलम्, नागलोकः इत्येते समार्थकाः शब्दाः

3. ''चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः''इत्यमरवचनात् चित्तम्, चेतः, हृदयम्, स्वान्तम्, हृत्, मानसम्, मनः इत्येते समार्थकाः।

पाठगतप्रश्न 17.2

9. लक्ष्मी कैसे परिपालित हैं?
10. क्या धारण करने पर भी उपक्रामित होती है?
11. श्री(लक्ष्मी) किसकी रक्षा नहीं करती?
12. सम्पत्ति किसका लक्षण अनुकरण नहीं करती?
13. लक्ष्मी किसका अनुरोध नहीं करती?
14. लक्ष्मी क्या विचार नहीं करती?
15. लक्ष्मी किस के समान परिरक्षलीत हो जाती है?
16. लक्ष्मी ने क्या ग्रहण करने के लिए विष्णु का आश्रय लिया?
17. लक्ष्मी किसका तमोबहुल है?
18. लक्ष्मी किसके समान दूसरे पुरुषों को उन्मत करती है?
19. सुमेल करो-

स्तम्भ -1	**स्तम्भ -2**
1. न रक्षति	1. वैदग्ध्यम्
2. न ईक्षते	2. लक्षणम्
3. न आलोकयते	3. अभिजनम्
4. न अनुवर्तते	4. श्रुतम
5. न पश्यति	5. त्यागम्
6. न गणयति	6. विशेषज्ञताम्
7. न आकर्णयति	7. आचारम्
8. न अनुरुध्यते	8. कुलक्रमम्
9. न आद्रियते	9. शीलम्
10. न विचारयति	10. रुपम्
11. न पालयति	11. परिचयम्
12. न प्रमाणीकरोति	12. धर्मम्

टिप्पणी

17.3 मूलपाठ

सरस्वतीपरिगृहीतमीर्ष्ययेव नालिंगति जनम्, गुणवन्तमपवित्रमिव न स्पृशति, उदारसत्त्वममगडलमिव न बहु मन्यते, सुजनमनिमित्तमिव न पश्यति, अभिजातमहिमिव लङ्यति, शूरं कण्टकमिव परिहरति, दातारं दु:स्वप्नमिव न स्मरति, विनीतं पातकिनमिव नोपसर्पति, मनस्विनमुन्मत्तमिवोपहसति। परस्परविरुद्धञ्चेन्द्रजालमिव दर्शयन्ती प्रकटयति जगति निजं चरितम्। तथाहि - सततम् ऊष्माणमुपजनयन्त्यपि जाङ्यमुपजनयति। उन्नतिमादधानापि नीचस्वभावताम् आविष्करोति। तोयराशिसंभवापि तृष्णां सम्वर्धयति। ईश्वरतामादधानाप्यशिवप्रकृतित्वमातनोति। बलोपचयमाहरन्त्यपि लघिमानमापादयति। अमृतसहोदरापि कटुकविपाका। विग्रहवत्यप्यप्रत्यक्षदर्शना। पुरुषोत्तमरतापि खल-जन-प्रिया। रेणुमयीव स्वच्छमति कलुषीकरोति। यथा यथा चेयं चपला दीप्यते तथा तथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव कर्म केवलमुद्वमति।

व्याख्या-

वाणी की देवी सरस्वती के साथ मानो इसका ईर्ष्याभाव है, यही कारण है कि जिस व्यक्ति पर सरस्वती की कृपा है। अर्थात् उस विद्वान् पुरुष को ईर्ष्यावश आलिंगन नहीं करती है भाव यह है कि विद्वान पुरुष धन विहीन रहते हैं। गुणवान व्यक्ति के पास भी यह नहीं रहती है। उस गुणवान को यह उसी प्रकार स्पर्श नहीं करती जिस प्रकार अपवित्र व्यक्ति का स्पर्श नहीं किया जाता है। उदारस्वभाव पुरुष का अमंगल के समान बहुत आदर नहीं करती है। सज्जन पुरुष को अपशकुन के समान नहीं देखती है। उच्च कुलोत्पन्न अभिजात पुरुष को सर्प के समान लांघ कर चली जाती है। शूरवीर पुरुष को कंटक के समान परित्याग कर देती है। दानशील पुरुष को बुरे स्वप्न के समान स्मरण नहीं करती। विनय सम्पन्न जन के पास पापी समझकर नहीं जातीं। मनस्वी जन को पागल मानकर उपहास करती है।

यह लक्ष्मी इन्द्रजाल के कौतुक को दिखाती हुई इस संसार में परस्पर विरुद्ध धर्म समन्वित अपना चरित्र प्रकट करती हैं क्योंकि सर्वदा उष्णता उत्पन्न करती हुई भी शीतलता उत्पन्न करती है। अर्थात् धन का अहंकार उत्पन्न करती हुई भी शीतलता उत्पन्न करती है। अर्थात् धन का अहंकार उत्पन्न करके मनुष्य को सदविवेक शून्य कर देती है। उन्नति ऊँचाई या उत्कर्ष को धारण करती हुई भी नीच स्वभाव को प्रकट करती है। समुद्र में उत्पन्न होकर भी तृष्णा को बढाती है। शिव अर्थात् ईश्वरत्व होकर भी अशिव स्वभाव का विस्तार करती है अर्थात् लोगों में प्रभुत्व उत्पन्न करके भी परपीडन अमंगलकारी स्वभाव को फैलाती है बल को बढ़ाती हुई भी कायरता या भारहीनता को प्रदान करती है, अर्थात् स्वभाव से व्यक्ति को कृपण बना देती हैं।

अमृत की सहोदरा अर्थात् बहन होती हुई भी परिणाम में कड़वी अर्थात् दु:खदायी होती है। अत कहा गया है- अर्थानामर्जने दु:खमर्जितानां च रक्षणे।

आये दु:खं व्यये दु:खं धिगर्थात्कृष्टसंश्रयात्॥

वह लक्ष्मी मूर्तिमती अर्थात् शरीर वाली होती हुई भी चाक्षुष प्रत्यक्ष के योग्य नहीं है अर्थात् धनिकों के बीच परस्पर कलह उत्पन्न कर दृष्टिगोचर नहीं होती है। श्रेष्ठ पुरुष अर्थात् विष्णु के अनुरक्त होती हुई भी दुष्ट जनों की प्रिया है अर्थात् दुर्जन लोगों से ही प्रेम करने वाली है। धूलिमयी सी बनी हुई यह लक्ष्मी स्वच्छ जनों और पदार्थों को भी कलंकित कर देती है। जैसे-जैसे यह लक्ष्मी चपला प्रदीप्त होती है। वैसे-वैसे दीपशिखा के समान कज्जलमलिन कर्म को ही उत्पन्न करती है।

सरलार्थ- देवी सरस्वती से स्वीकृत विद्वानों को ईर्ष्या से लक्ष्मी स्वीकार नहीं करती है। वह गुणसपन्न को अपवित्र के समान स्पर्श नहीं करती, उदार स्वभाव सम्पन्न जन को अमांगलिक के समान अधिकतया नहीं मानती है। सज्जन को लक्षणरहित के समान नहीं देखती, कुलीन पुरुष को सर्प के समान त्याग देती है। शूरवीर जन को कण्टक के समान परित्याग करती है। दाता को दु:स्वप्न के समान कभी भी स्मरण नहीं करती। विनय युक्त पुरुष को पापी मानकर उसके समीप नहीं आती। मनस्वी पुरुष को उन्मत्त मानकर उस पर हँसती है। इन्द्रजाल जैसा वास्तविक जगत भिन्न है यह लक्ष्मी भी इन्द्रजाल के समान जगत में परस्पर विरुद्ध अपने चरित्र को प्रदर्शित करती है। धन का तेज और मूर्खता अत्यन्त विरुद्ध है। वह लक्ष्मी प्रतिक्षण ऊष्मा नाम के धन के तेज को पैदा करती है परन्तु साथ में ही अत्यन्त विरुद्ध जाड्य अर्थात् मूर्खता भी उत्पन्न करती है। उन्नति से मन में उदारता आती है। परन्तु इस से उन्नति प्राप्त करता है वह विरुद्ध स्वभावयुक्त नीचस्वभाव को भी प्राप्त करता है। यह लक्ष्मी समुद्र से उत्पन्न हुई परन्तु तृष्णा को बढ़ाती है ईश्वर भाव नाम से मंगल परिसर का विस्तार करती है उसके साथ ही अमागंलिक प्रकृति का भी प्रसार करती है। शक्ति को बढ़ाने के लिए शिक्षा देती है साथ ही तुच्छता को भी बढ़ाती है। वह अमृत की सहोदरा है परन्तु कटु नाम के अनिष्ट का कारण स्वरुप है। यह विग्रह सम्पन्न नाम से कलह युक्ता है परन्तु इसका प्रत्यक्ष नहीं होता है। वह लक्ष्मी भगवान पुरुषोत्तम वासुदेव में आसक्त है परन्तु इसका प्रत्यक्ष नहीं होता है परन्तु दुर्जनों की प्रिया है। वह रेणुमयी नाम से रजोगुण सम्पन्न है परन्तु निर्मल जन को भी मलिन करती है। वह जैसे-जैसे प्रकाशित होती है वैसे-वैसे दीप की शिखा वैसे ही अञ्जन को प्रकाशित करती है। इस प्रकार मलिन कर्म को प्रकट करती है।

व्याकरणविमर्श-

क) समास:

1. **सरस्वतीपरिगृहीतम्** - सरस्वत्या परिगृहीतं सरस्वतीपरिगृहीतम् इति तृतीयातत्पुरुषसमास:
2. **अमृतसहोदरा** - अमृतस्य सहोदरा अमृतसहोदरा इति षष्ठीत्पुरुषसमास:।

अलंकारविमर्श -

1. लक्ष्मी का ईर्ष्यागुण होने से गुणोत्प्रेक्षा स्त्रीलिंग द्वारा सपत्नी व्यवहार से समासोक्ति है उसका लक्षण साहित्यदर्पण में' समासोक्ति: समैर्यत्र कार्यलिंग विशेषणै:।

   व्यवहार समारोप: प्रस्तुतेऽन्यस्य वस्तुन:।

टिप्पणी

गुण उत्प्रेक्षा और समासोक्त का अंगांभाव से संकर अलंकार है।

2. मनस्विनमित्यस्मिन वाक्य में - उप्प्रेक्षा अलंकार है।

3. उन्नतिम् इति औनत्ये वाक्य में उन्नति नीच स्वभाव का विरुद्धत्य से विरोधाभास अलंकार है।

पाठगतप्रश्न 17.3

20. लक्ष्मी किसको ईर्ष्या से आलिंगन नहीं करती?

21. लक्ष्मी किसको अमंगल के समान मानती है?

22. लक्ष्मी किसे अनिमित्त के समान नहीं देखती?

23. श्री लक्ष्मी किसको अपवित्र के समान स्पर्श नहीं करती?

24. लक्ष्मी किसको दु:स्वप्न के समान स्मरण नहीं करती?

25. श्री लक्ष्मी जगत में कैसा अपना चरित्र प्रदर्शन करती है?

26. उन्नति को धारण करके भी क्या प्रकट करती है?

27. लक्ष्मी क्या प्रकृतित्व फैलाती है?

28. श्री लक्ष्मी किसको प्रिय है?

29. लक्ष्मी किसके समान मलिन कर्म प्रकट करती है?

30. श्री लक्ष्मी क्या बढ़ाती है?

17.4 मूलपाठ

तथाहि इयं संवर्धनवारिधारा तृष्णाविषवल्लीनाम्, व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्, परामर्शधूमलेखा सच्चरितचित्राणाम्, विभ्रमशय्या मोहदीर्घनिद्राणाम्, निवासजीर्णवलभी धनमदपिशाचिकानाम्, तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम्, पुरःपताका सर्वाविनयानाम्, उत्पत्तिनिम्नगा क्रोधावेगग्राहाणाम्, आपानभूमिर्विषयधूनाम्, सङ्गीतशाला भ्रूविकारनाटयानाम्, आवासदरी दोषाशीविषाणाम्, उत्सारणवेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम्, अकालप्रावृड् गुणकलहंसकानाम्, विसर्पणभूमिर्लोकापवादविस्फोटकानाम्, प्रस्तावना कपटनाटकस्य, कदलिका काकरिणः, वध्यशाला साधुभावस्य, राहुजिह्वा धर्मेन्दुमण्डलस्य। न हि तं पश्यामि, यो ह्यपरिचितया अनया न निर्भरमुपगूढः। यो वा न विप्रलब्धः। नियतमियमालेख्यगतापि चलति, पुस्तमय्यपीन्द्रजालमाचरति, उत्कीर्णापि विप्रलभते, श्रुताप्यभिसंधत्ते, चिन्तितापि वंचयति।

व्याख्या-

यह लक्ष्मी विषय वासना रुपी विषलता समूह की वृद्धि करने वाली जलधारा है। अर्थात् यह मृगतृष्णा की वृद्धि करती है। इन्द्रिय रुपी हरिणों के पक्ष में व्याधों के गीत है अर्थात् जैसे व्याध का गीत हरिणों को आकर्षित करता है, वैसे यह इन्द्रियों को आकर्षित करती है। अच्छे आचरण रूप चित्र समूह का आवरण करने वाली धूम पंक्ति है। अर्थात् जैसे धुएं से चित्र मिट जाते है। वैसे यह सच्चरित्र को बिगाड देती है। मोहरुपी दीर्घ निद्रा के लिए कोमल शय्या है। धनाभिमान रुप राक्षसनियों के रहने के लिए पुराना भवन है। शास्त्र रुपी नेत्र के पक्ष में तिमिर नामक नेत्र रोग है जैसे तिमिर रोग नेत्रों की दर्शन शक्ति का नाश करती है वैसे ही लक्ष्मी शास्त्र ज्ञान का नाश करती है।

यह लक्ष्मी सब अविनयों की अग्रपताका है भाव यह है कि जिस प्रकार अग्रपता का के दिखाई देने से उसके पीछे आने वाली सेना का अनुमान सहज ही हो जाता है उसी प्रकार किसी व्यक्ति के पास लक्ष्मी के आते ही उसके पीछे-पीछे अनिवार्य रूप से माने वाले सभी प्रकार के अविनय व दुराचारों का भी अनुमान हो जाता है। यह लक्ष्मी क्रोधावेग रुपी ग्रहों की उत्पत्ति के लिए नदी है, अर्थात् नदी में जिस प्रकार ग्राह अर्थात् मगर उत्पन्न हो जाते हैं। उसी प्रकार लक्ष्मी की विद्यमानता में क्रोध का आवेग उत्पन्न होता है। धन की गर्मी के कारण व्यक्ति को बात-बात में क्रोध आता है।

विषय रुपी मदिराओं की लक्ष्मी पान भूमि है। अर्थात् जिस प्रकार से मदिरालय में प्रचुर मात्रा में मदिरा पी जाती है तथा वह पीने वालो को नष्ट कर देती है। उसी प्रकार लक्ष्मी के आने पर व्यक्ति मालाचन्द वनिता आदि भोगों का अत्यधिक उपयोग करता है तथा अपना सर्वनाश ही कर बैठता है। जब लक्ष्मी आती है तब ही विषय भोगों में आसक्ति होती है।

भ्रूविकाररूपी अभिनय की संगीतशाला है। कामादिदोष रूपी विषधर सर्पो के रहने की गुफा है। सज्जनों के सद्व्यवहारों को दूर भागने वाली बेंत की छड़ी है। दया दाक्षिण्य आदि गुणरुपी श्रेष्ठ राजहंसों की असामयिकोपस्थित वर्षा ऋतु है। लोकनिंदारूप का विस्तार करने वाली भूमि है। कपटाचरण रूपी नाटक की प्रस्तावना है। लक्ष्मी में स्थित होकर नाना प्रकार के कपटाचरण करते हैं। कन्दर्परूपी हाथी का कदलीवन है। इस प्रकार ही लक्ष्मी होती है तो अनेक प्रकार मन्मथ विकार लोगों में उत्पन्न होते हैं। धर्माचरण रूपी चन्द्रमण्डल के लिए राहुजिह्वा है। राहुजिह्वा सिंहीकागर्भसम्भूत राहु की रसना है। जब लक्ष्मी आती है तो सुकृत आचरण का लोप हो जाता है। मैं ऐसा कोई पुरुष नहीं देखता हूँ जो कि इस अपरिचिता लक्ष्मी द्वारा गाढ़ आलिंगित होकर बाद में प्रताड़ित नहीं हुआ हो। यह कुलटा के समान सर्वत्र सम्बन्ध धारण करती और उसका प्रसार करती है। यह लक्ष्मी चित्र पर चित्रित होने पर भी निःसन्देह चली जाती है। पुस्तकमय भी इन्द्रजाल के कौतुहल का आचरण करती है। मृत्तिका या काष्ठादि द्वारा पुतली बनाकर रखने पर भी जादू के समान व्यवहार करती है। पत्थर में खुदवा कर रखने पर भी धोखा दे जाती है। शास्त्रभिज्ञ होने पर भी दुर्व्यवहार करती है। प्राप्ति की आशा से शान्तिपूर्वक ध्यान करने पर भी ठगती है।

सरलार्थ- वह लक्ष्मी जैसे तृष्णा रूपी विषलता को बढ़ाने वाली जलधारा है इन्द्रियरूपमृग को आकर्षित करने वाला व्याध का गीत है। धूम जैसे दर्पण को मलिन करता है। इसी प्रकार ही

टिप्पणी

उत्तम चरित्र सम्पन्न जन कालुष्यता को प्राप्त होते है। मोहरुपदीर्घ निद्रा सम्पन्न चरित्र सम्पन्न जन कालुष्यता को प्राप्त होते है। मोहरुपदीर्घ निद्रा सम्पन्न जनों के लिए विलास शय्या है। धन, मद, लोलुप, पिशाची के लिए वह निवास योग्य गुफा के समान है। जिनकी दृष्टि शास्त्रानुसार प्रवृत होती है। उसके लिए तिमिर नाम नेत्र रोग है। वह सभी उदारजनों की अग्रवैजन्ती नाम का हेतु है। जैसे नदी का ग्राह (मगरमच्छ) अवहारों को उत्पन्न करते हैं। इसी प्रकार कोपावेविष्ट वे लक्ष्मी में ही पैदा होते हैं। वह शब्द स्पर्शादि विषय मदिरा की पान भूमि है। अर्थात् लक्ष्मी में विषय भोगासक्ति होती है। यह भ्रूविकार नाटक की संगीतशाला है। दोषरूप सर्प की यह निवास की गुफा है। यह बेंत की छड़ी से सत आचारण को अपसारित करती है। अर्थात् लक्ष्मी में शिष्टाचार नष्ट हो जाता है। यह गुणराज हंस की अकाल वृष्टि के समान है अर्थात् यह गुणों की विनाश कारक है। यह लोकापवाद की विस्तरण स्थल है। अर्थात् यहाँ ही कुकर्म आचरण होता है। इससे ही कपट आचरण होता है। कदली गज के लिए अत्यन्त रुचिकर है। कामदेव गज की यह कदलीस्वरुप है। अर्थात् इसमें अनेक प्रकार के काम विकार उत्पन्न होते हैं। सज्जनों की यह वध्यभूमि है। राहु के प्रभाव से चन्द्र का ग्रहण होता है। यह धर्मचन्द्र का राहुचिह्वा के समान है। अर्थात् इससे सज्जनों के सदाचरण का लोप हो जाता है। पुश्चली (कुलटा) जैसे सभी के साथ सम्बन्ध स्थापित करती है सभी का आलिंगन करती है। किसी को नहीं छोड़ती। लोक में न कोई उस प्रकार है जो लक्ष्मी से आलिंगित नहीं है, अथवा न कोई इससे वंचित है। यह चित्रस्थित होकर भी चलती हैं। इन्द्रजाल के समान सहसा विलुप्त हो जाती है। प्रस्तर आदि में लिखित होने पर भी वह विस्मृत हो जाती है। यह शास्त्रों में सुनी जाने पर भी अनुसन्धान की जाती है। वह आराधिता अर्थात् ध्यान करने पर भी ध्यान का प्रसार करती है।

व्याकरणविमर्श-

1. **व्याधगीतिः** - व्याधस्य गीतिः व्याधगीतिः इति षष्ठितत्पुरुषसमासः।
2. **इन्द्रियमृगाणाम्** - इन्द्रियाणि एव मृगाणि इन्द्रियमृगाणि इति कर्मधारयसमासः, तेषाम् इन्द्रियमृगाणाम्।
3. **धनमदपिशाचिकानाम्** - धनमदाः एव पिशाचिकाः इति कर्मधारयसमासः, तासाम् ध नमदपिशाचिकानाम् इति षष्ठितत्पुरुषसमासः।
4. **शास्त्रदृष्टीनाम्** - शास्त्राणि एव दृष्टयः येषां ते शास्त्रदृष्टयः इति बहुव्रीहिसमासः, तेषाम् इति।

अलंकारविमर्श -

1. पुरः पताकासर्वाविनयानाम् और उत्सारणवेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम् यहाँ पर रुपक अलंकार है।
2. न हि तं पश्यति इस वाक्य में लक्ष्मी की कुलटा की समानता होने से समासोक्ति अलंकार है।

3. चिन्तितापि वञ्चयति में परस्पर विरोध होन से विरोधाभास अलंकार है।

कोशः-

1. ''वल्ली तु व्रततिर्लता'' इत्यमरवचनाद् वल्ली, व्रततिः, लता इत्येते समार्थकाः।
2. ''दरी तु कन्दरो वा स्त्री देवखातबिले गुहा'' इत्यमरोक्तेः दरी, कन्दरः, देवखातम्, बिलम्, गुहा इत्येते समार्थकाः शब्दाः।

पाठगतप्रश्न 17.4

31. तृण्णाविषवल्ली में लक्ष्मी कैसी है?
32. सच्चरित चित्रों की लक्ष्मी कैसी है?
33. महादीर्घनिद्रा श्री लक्ष्मी कैसे हुई?
34. शास्त्रदृष्टि में लक्ष्मी कैसी है?
35. भ्रुविकारनाटकों की श्री लक्ष्मी का क्या रुप है?
36. गुणकलहंसों में लक्ष्मी कैसी है?
37. साधुभाव में श्री लक्ष्मी कैसी है?
38. राहुजिह्वा के समान लक्ष्मी किसकी नाशिका है?
39. श्री लक्ष्मी क्या होती हुई विलुप्त होती है?
40. लक्ष्मी चिन्तन करने पर भी क्या करती है?

पाठसार

समस्त लोक श्री लक्ष्मी की कामना के लिए यत्न करता है परन्तु उसके दुश्चरित को सबसे पहले अवश्य ही जानना चाहिए। प्रस्तुत अंश में शुकनास लक्ष्मी के वास्तविक स्वरुप का प्रकाशित करते हैं। इसमें अनेक प्रकार के चाञ्चल्य, मोहिनी और शक्ति आदि हैं वह क्षणभर में एक पुरुष से दूसरे पुरुष के पास चली जाती है। वह एक पुरुष को प्रेम करती हुए दूसरे पुरुष का आलिंगन करती है। किसी के पास स्थायी रूप से नहीं रहती है। आने पर वह दुःख से रक्षीत है। अनेक प्रकार के बल की सहायता से भी उसका बन्धन असम्भव है। उसकी ही मोहिनी शक्ति है। उसके प्रभाव से व्यक्ति अपने परिचय को भूल जाता है। कुलपरम्परा की भी परवाह नहीं करती। अपने-अपनों की ये परायी प्रतीत होती है। इसके माहात्म्य से धर्मानुचरण का नाश होता है। त्याग दया दाक्षिण्य आदि सद्गुण विलुप्त हो जाते हैं। सत्यभाषण तो कथामात्रावशेष रहता है। कभी वह धनरत्नादि से समृद्ध करती है। तभी तलवार की धार पर

स्थित होकर समूल नष्ट कर देती है। यह लक्ष्मी अविश्वसनीय है। गंगा के समान यह समस्त लोकों की जननी है। परन्तु जल बुदबुद के समान चञ्चल अर्थात् प्रतिपद अस्थिर है।

बलवान धूर्त और कपट इसके प्रिय है और सज्जन अप्रिय है। जैसे हिडिम्बा ने बल को देखकर भीम का वरण किया उसी प्रकार जो साहसिक है उसके अपना बनाती है। जो ग्रहण करता है, उसे पागल बना देती है। गुणवान एवं विद्वानों से विद्वेष करती है। कमल के कंटक को जैसे हमारे द्वारा दूर किया जाता है उसी प्रकार वीर हृदय पुरुष को कंटक के समान दूर कर देती है। जैसे बुरा स्वप्न हमारे द्वारा फिर नहीं चाहा जाता है उसी प्रकार वे दाता को आदर नहीं देती है।

यह श्री अवर्णनीय है। इन्द्रजाल के समान यह परस्पर विरुद्ध विषयों को एक साथ प्रकट करती है। वह उन्नति के लिए प्रेरणा देती है परन्तु साथ में ही आलस्य दीर्घसूत्रता निद्रा आदि तमों गुणों को पैदा करती है। विषय भोग की आकांक्षा के निरावारण के लिए धनादि देती है परन्तु प्राप्ति के लिए तृष्णा को भी बढ़ाती हैं। श्री लक्ष्मी विष्णु में रत है परन्तु वह खल एवं कपटों द्वारा प्रार्थनीय है। अन्धकार प्रकोष्ठ में दीप की शिखा जलाते हैं तो वह वहाँ स्थित वस्तु का प्रकाशित करती है श्री लक्ष्मी भी अपने कुकर्मो को प्रकट करती है।

विलक्षण स्वभाव वाली यह लक्ष्मी है। जल के सिञ्चन से वृक्ष का वर्धन होता है। यह विषयरूप विषवृक्ष को जलधारा के समान बढाती है। धूम जैसे दर्पण का आवरण करती है। उसी प्रकार यह भी सज्जनों के चरित्र का आवरण करती है। धनमदलोलुप को वह जागृति करती है और शास्त्रविधि को भूलकर प्रवृत को रोकती है।

यह सज्जनों का नाश करने वाली है, जैसे बिना समय वृष्टि होने से राजहंस मरते है। उसी प्रकार इसके प्रभाव से गुणवानों का विनाश होता है। बेंत की छड़ी को धारण करती है। उससे किसी का भी निःसतरण होता है। इस प्रकार यह वेद विहित व्यवहारों को दूर करती है। राहुजिह्वा जैसे चन्द्र को उदरी करती है। यह धर्मचन्द्र का लोप करती है। गणिका (कुलटा) सभी पुरुषों को प्रेम करती है और आलिंगन करती है। परन्तु वह किसी का भी परित्याग नहीं करती है। इसी प्रकार श्री लक्ष्मी भी सभी को मोहित करती है। किसी को भी अपने मोह के बन्धन से दूर नहीं फेंकती है।

श्री लक्ष्मी मनुष्यों में जाड्यमान्धादिगुण विशिष्टों को धारण करती है। वह मानवों को प्रतिपद नीचे गिराती है। अतः इस श्री लक्ष्मी को सावधान पूर्वक स्थिर करों। भोगवासनादि का परित्याग कर राज्य के रक्षण का विधान करना चाहिए। इस पाठ में शुकनास यह उपदेश देते हैं।

पाठान्तप्रश्न

1. लक्ष्मी के उत्पत्ति रहस्य का वर्णन करो।
2. लक्ष्मी के स्वभाव का वर्णन करो।
3. जगत में लक्ष्मी के परस्पर विरुद्ध चरितों का वर्णन करो।

4. लक्ष्मी के अप्रियत्व एवं सद्वेषत्व का वर्णन करो।
5. लक्ष्मी का किनके प्रति स्नेहादि नहीं है।
6. लक्ष्मी के दुश्चरित का वर्णन करो।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

17.1

1. लक्ष्मी ने क्षीरसागर में पारिजातपल्लवो से राग स्वीकार किया।
2. श्री लक्ष्मी ने उच्चैःश्रवा से चंचलता सीखी।
3. लक्ष्मी ने कौस्तुभमणि से नैष्ठुर्य जानी।
4. मोहनशक्ति कालकूट से सीखी।
5. .....क्षीरसागरात्.....
6. .....कल्याणाभिनिवेशी.....
7. सम्मेलन -

   1-6, 2-5, 3-2, 4-1, 5-4, 6-3
8. कालकूटात्+मोहनशक्तिम्।

17.2

9. लक्ष्मी दुःख से परिपालित होती है।
10. पिंजरे में धारण करने पर भी चली जाती है।
11. परिचय की रक्षा नहीं करती।
12. सम्पति कुलक्रम का अनुसरण नहीं करती।
13. धर्म का अनुरोध नहीं करती।
14. विशेषज्ञता का विचार नहीं करती।
15. विविधगन्धगजमण्डलमधुपान मल के समान परिस्खलित होती है।
16. विश्वरूप ग्रहण करने के लिए विष्णु का आश्रय लिया।
17. श्री लक्ष्मी पाताल की गुफा के समान तमोबहुला है।

18. दुष्टपिशाची के समान दूसरे पुरुषों को उन्मत करती है।

19. मेल करो

1-11, 2-3, 3-10, 4-8, 5-9, 6-1, 7-4, 8-12, 9-5, 10-6, 11-7, 12-2

17.3

20. लक्ष्मी सरस्वती को ग्रहण करने वाले विद्वानों से ईर्ष्या करती है।

21. श्री लक्ष्मी उदारजनों को अमंगल के समान मानती है।

22. लक्ष्मी सज्जन को अपशकुन के समान नहीं देखती।

23. श्री लक्ष्मी गुणवान को अपवित्र के समान स्पर्श नहीं करती।

24. लक्ष्मी दाता को बुरे स्वप्न के समान स्मरण नहीं करती।

25. श्री लक्ष्मी जगत में परस्पर विरुद्ध अपने चरित्र को प्रकट करती है।

26. उन्नति को धारण करती हुई भी नीच स्वभाव को प्रकट करती है।

27. लक्ष्मी अमंगल प्रकृत्ति को फैलाती है।

28. श्री लक्ष्मी दुष्टों की प्रिया है।

29. दीपशिखा के समान मलिन कर्म करती है।

30. तृष्णा को बढाती हैं।

17.4

31. तृष्णाविषवल्ली को वृद्धि करने वाली जलधारा है।

32. सच्चरित चित्रों का आवरण करने वाली धूम पंक्ति है।

33. महादीर्घनिद्रा लक्ष्मी की शय्या है।

34. शास्त्रदृष्टि श्री लक्ष्मी का तिमिर नामक नेत्ररोग है।

35. भ्रूविकारनाटक की श्री लक्ष्मी संगीतशाला है।

36. गुणकलहंस के श्री लक्ष्मी अकालवृष्टि के समान है।

37. साधुभाव की श्री लक्ष्मी बध्यशाला है।

38. राहुजिह्वा के समान लक्ष्मी धर्मेन्द्रमण्डल की नाशिका है।

39. श्री लक्ष्मी उत्कीर्ण करने पर भी धोखा देती है।

40. लक्ष्मी चिन्तन करने पर भी ठगती है।